Volume: 3 Issue: 7 Pages: 70-72

भारतीय ग्रंथों में राजनीतिक दर्शन: श्रीमद्भागवत पुराण के विशेष सन्दर्भ में

[*1] हिमांशु थपलियाल व [2]डॉ0 प्रकाश लखेड़ा

[*1] शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, स्वामी विवेकानंद राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय लोहाघाट (चम्पावत) उत्तराखंड, भारत।

[2] विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, स्वामी विवेकानंद राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय (चम्पावत) उत्तराखंड, भारत।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (SJIF): 5.231
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 22/June/2024
Accepted: 25/July/2024

***Corresponding Author**
हिमांशु थपलियाल
शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, स्वामी विवेकानंद राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय लोहाघाट (चम्पावत) उत्तराखंड, भारत।

सारांश:
भारतवर्ष का अतीत अत्यन्त गौरवशाली रहा है इसका प्रमाण अनेक विद्याओं से परिपूर्ण ग्रंथों से प्राप्त होता है। भारतीय ग्रंथों पर दृष्टिपात करें तो अनेक ग्रन्थ अपने आप में ज्ञान की अमूल्य निधियां समेटे हुए हैं। इन्हीं प्राचीन ग्रंथों में से श्रीमद्भागवत पुराण एक पवित्र हिंदू धर्मग्रंथ है जो दार्शनिक और राजनीतिक विचारों के समृद्ध भंडार के रूप में कार्य करता है। इसने सदियों से भारतीय उपमहाद्वीप को गहराई से प्रभावित किया है। इस शोध पत्र का उद्देश्य श्रीमद्भागवत पुराण में निहित जटिल और बहुआयामी राजनीतिक दर्शन का पता लगाना, शासन की अवधारणाओं, संप्रभुता की प्रकृति, शासकों और शासितों के बीच संबंधों और राजनीतिक क्षेत्र में नैतिकता और धर्म की भूमिका की जांच करना है। यह पत्र शासक के आदर्श गुणों और जिम्मेदारियों, राजाओं के दैवीय अधिकार की अवधारणा और आध्यात्मिक एवं सांसारिक अधिकार के बीच संतुलन के बारे में पाठ के दृष्टिकोणों पर गहराई से विचार करता है। इसके अतिरिक्त, यह कल्याणकारी राज्य की अवधारणा, नागरिकों के कर्तव्यों एवं जिम्मेदारियों और समकालीन भारतीय समाज एवं उसके भविष्य के लिए इसके राजनीतिक दर्शन के व्यापक निहितार्थों पर पुराण की शिक्षाओं के प्रभाव का विश्लेषण करता है। श्रीमद्भागवत पुराण समेत प्राचीन ग्रंथों की अपनी व्यापक खोज के माध्यम से, यह शोध पत्र विभिन्न जटिल राजनीतिक विचारों की गहरी समझ में योगदान देगा, जिन्होंने भारतीय सांस्कृतिक और बौद्धिक परिदृश्य को आकार दिया है।

मुख्य शब्द: श्रीमद्भागवत पुराण, भारतीय राजनीतिक दर्शन, शासन, संप्रभुता, धर्म, हिंदू ग्रंथ

प्रस्तावना:

समृद्ध भारतीय ज्ञान परंपरा में वेद, उपनिषद्, ब्राह्मण ग्रन्थ, महाभारत और रामायण के अलावा पुराणों का विशेष महत्व है। लक्षणों के आधार पर पुराणों का अग्रिम वर्गीकरण महापुराण और उपपुराणों के रूप में भी किया गया है जिनमें श्रीमद्भागवत एक महापुराण की संज्ञा रखता है इसलिए इसे भागवत पुराण, श्रीमद्भागवत महापुराण, भागवतम या केवल भागवत के नाम से भी संबोधित किया जाता है। [1] भागवत भारतवर्ष के राष्ट्रीय-साहित्य की एक अक्षय-कीर्ति है। [2] श्रीमद्भागवत पुराण सबसे अधिक पूजनीय और व्यापक रूप से अध्ययन किए जाने वाले हिंदू धर्मग्रंथों में से एक है, जो दार्शनिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक अंतर्दृष्टि का खजाना है। इसने सदियों से भारतीय उपमहाद्वीप को गहराई से प्रभावित किया है। यद्यपि यह ग्रंथ मुख्य रूप से अपनी समृद्ध कथाओं, पौराणिक विवरणों और गहन आध्यात्मिक शिक्षाओं के लिए जाना जाता है, तथापि इसमें एक बहुआयामी और जटिल राजनीतिक दर्शन भी शामिल है जो भारतीय संदर्भ में शासन, अधिकार और शासकों एवं शासितों के बीच संबंधों की गतिशीलता को महत्वपूर्ण रूप से संबोधित करता है। प्रस्तुत शोध पत्र में श्रीमद्भागवत पुराण में निहित राजनीतिक दर्शन को व्यापक रूप से समझने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही एक आदर्श शासक की अवधारणाओं, अधिकार की प्रकृति, राजनीतिक क्षेत्र में नैतिकता, धर्म की भूमिका और समकालीन भारतीय समाज और उससे परे इसकी शिक्षाओं के व्यापक निहितार्थों की खोज करने का कार्य किया गया है।

आदर्श शासक और संप्रभुता की अवधारणा

श्रीमद्भागवत पुराण आदर्श शासक की विशेषताओं और जिम्मेदारियों की एक व्यापक और सूक्ष्म समझ प्रस्तुत करता है, जिसे अक्सर "धर्मी राजा" या "ईश्वर द्वारा अभिषिक्त संप्रभु" के रूप में संदर्भित किया जाता है। भागवत पुराण इस बात पर जोर देता है कि शासक को ज्ञान, करुणा, न्याय, साहस और लोगों के कल्याण के लिए गहरी प्रतिबद्धता सहित कई गुणों से संपन्न होना चाहिए। एक धर्मपरायण राजा के गुणधर्मों पर चर्चा की गई है, जिसमें सच्चाई, दया और ईमानदारी का महत्व रेखांकित किया गया है। भगवान श्रीराम के राज्य का उल्लेख करते हुए भागवत पुराण में शासक को अपने-

अपने आचार को निभाने वाली प्रजा के लिए पिता के समान पालनकर्ता बताया गया है। [3] एक सुयोग्य शासक के राज्यारूढ़ होने पर वन, नदी, पर्वत, वर्ष, द्वीप और समुद्र समेत समस्त प्रकृति सभी रूपों से प्रजा के लिए समस्त कामनाओं की पूर्ति में सहायक बन जाती हैं। [4] उत्तम शासक के द्वारा शासित राज्य में प्रजा के आरोग्य और दीर्घकालिक जीवन की अनुकूल परिस्थितियां निर्मित की जाती हैं। [5] ऐसा शासक स्वयं भी नीति के अनुरूप जीवन यापन कर प्रजा को उच्च जीवन मूल्यों को धारण करने के लिए प्रेरित करता है। [6] पुराण शासक की धारणा को एक ईश्वर द्वारा अभिषिक्त व्यक्ति के रूप में रेखांकित करता है, जिसका ईश्वर से एक विशेष संबंध होता है और धर्म के सिद्धांतों या धार्मिक आचरण के अनुसार शासन करने का पवित्र कर्तव्य होता है। [7] पुराण की संप्रभुता की अवधारणा शासक के विचार पर आधारित है, जो ईश्वरीय इच्छा का अवतार है, जिसमें शासन करने का अधिकार लोगों की सहमति से नहीं, बल्कि एक उच्च, आध्यात्मिक स्रोत से आता है। राजाओं के दैवीय अधिकार की यह धारणा ग्रन्थ के राजनीतिक दर्शन का एक केंद्रीय सिद्धांत है, जो शासक और शासित के बीच संबंधों की समझ को आकार देता है, साथ ही संप्रभु की सीमाओं और जिम्मेदारियों को भी। आध्यात्मिक और लौकिक अधिकार का संतुलन श्रीमद्भागवत पुराण के राजनीतिक दर्शन का एक प्रमुख पहलू आध्यात्मिक और लौकिक अधिकार के बीच एक नाजुक संतुलन बनाता है। पुराण का विवरण आध्यात्मिक और राजनीतिक दोनों क्षेत्रों के महत्व को पहचानता है, इन क्षेत्रों की अलग-अलग लेकिन परस्पर जुड़ी प्रकृति को स्वीकार करता है। एक ओर, पुराण आध्यात्मिक ज्ञान की प्रधानता और मोक्ष (मुक्ति) की खोज को मानव अस्तित्व के अंतिम लक्ष्य के रूप में महत्व देता है। [8] यह देश की आध्यात्मिक और धार्मिक परंपराओं को बनाए रखने और बढ़ावा देने, धर्म के उत्कर्ष और लोगों की भलाई सुनिश्चित करने में शासक की भूमिका को रेखांकित करता है। दूसरी ओर, यह शास्त्र राज्य कला, शासन और सामाजिक व्यवस्था के रखरखाव की व्यावहारिक आवश्यकताओं को भी स्वीकार करता है, तथा शासक की जिम्मेदारी को पहचानता है कि वह ज्ञान, न्याय और करुणा के साथ लौकिक शक्ति का उपयोग करे और एक पिता के समान स्वयं और अपनी प्रजा की रक्षा करे। [9] इस संतुलन के प्रति पुराण का दृष्टिकोण सूक्ष्म है, जो आध्यात्मिकता और राजनीति की अन्योन्याश्रयता पर प्रकाश डालता है, तथा शासक के लिए लोगों पर प्रभावी रूप से शासन करने और उनका मार्गदर्शन करने के लिए आध्यात्मिक और लौकिक दोनों तरह के अधिकार रखने की आवश्यकता पर जोर देता है। इस तरह से सम्पूर्ण उत्तरदायित्व का वहन करने वाले शासक को स्वर्गलोक का अधिकारी अर्थात एक श्रेष्ठ और गुणी शासक माना गया है, जो कि एक आदर्श शासक के रूप में उच्च नैतिक मूल्यों का स्वयं भी पालन करते हुए राजनीति के उच्च आदर्शों को प्रकट करता है। [10]

कल्याणकारी राज्य की अवधारणा और नागरिकों के कर्तव्य

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में शासन व्यवस्था के स्वरुप का यदि अवलोकन किया जाये तो मूलतः यह एक कल्याणकारी राज्य को ओर इंगित करती है जहाँ शासक पूर्ण रूप से अपनी प्रजा के कल्याण और उन्हें सुरक्षित जीवन उपलब्ध कराने हेतु तत्पर होना चाहिए। राज्य में नागरिकों के लिए कर्तव्य भी निर्धारित किये गए जो कि धार्मिक, सामाजिक और नैतिक मूल्यों पर आधारित थे। रामायण और महाभारत जैसे ग्रंथों में विशेष रूप से इस व्यवस्था के उदाहरण देखने को मिलते हैं जहाँ पर राजा को भी उच्च नैतिक और सामाजिक मूल्यों का पालन करना अनिवार्य था। हालाँकि कालांतर में कौटिल्य का दर्शन राजा को राज्य के रक्षार्थ कुछ स्थानों पर छूट देता है। श्रीमद्भगवद गीता भी एक प्राचीन ग्रन्थ है, जिसे महाभारत के ही भीष्मपर्व के अध्याय 23 से 40 तक से ही लिया गया है। इसमें भी अध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। यद्यपि भागवत पुराण भी महाभारत के कथानक को आगे बढाता है इसलिए इन दोनों में सैद्धांतिक साम्यता भी देखी जा सकती है। श्रीमद्भागवत पुराण में एक उदार राज्य की अवधारणा शामिल है जो अपने नागरिकों की समग्र भलाई और समृद्धि के लिए जिम्मेदार है। यह ग्रंथ लोगों की आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक प्रगति सुनिश्चित करने और न्याय, समानता और संसाधनों के न्यायसंगत वितरण के सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए शासक के कर्तव्य पर जोर देता है। नागरिकों के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों पर पुराण का दृष्टिकोण समान रूप से सूक्ष्म है, जो शासक और शासित के बीच अन्योन्याश्रित संबंधों को पहचानता है। यह शास्त्र नागरिक भागीदारी, सामाजिक सद्भाव और समुदाय के सदस्य के रूप में अपनी धार्मिक जिम्मेदारियों को पूरा करने के महत्व पर प्रकाश डालता है। श्रीमद्भागवत पुराण एक उदार राज्य की अवधारणा और नागरिकों के कर्तव्यों को राष्ट्र के कल्याण और प्रगति के लिए सामाजिक अनुबंध और सामूहिक जिम्मेदारी की व्यापक समझ के रूप में चित्रित करता है। [11] श्रीमद्भागवत महापुराण मूलतः भगवान् श्रीकृष्ण के जीवन और उनकी लीलाओं का वर्णन करता है। ग्रन्थ के दसवें स्कंध के पूर्वार्ध और उत्तरार्ध में श्रीकृष्ण की जीवन लीलाओं को वर्णित किया गया है। एकादश स्कंध में कुछ प्रसंगों के साथ ही श्रीकृष्ण के द्वारा उद्धव जी को अवधूतोपाख्यान का उपदेश और बहुविध विषयों के प्रतिपादन के अंतर्गत धर्म, कर्तव्य, आध्यात्म, नीति, समाज और राजनीति सम्बन्धी मूल्यों का वर्णन मिलता है। [12] श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन को गीता में दिए गए उपदेशों और एकादश स्कंध की व्याख्या के आधार पर वर्णित कई विचार आज के समाज में भी प्रासंगिक है। यहाँ कुछ प्रमुख बिंदु दिए गए हैं जो इसकी प्रासंगिकता को दर्शाते हैं:

धर्म और कर्म: गीता में कर्म करने की प्रेरणा दी गई है, जिसमें कहा गया है कि व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए, चाहे परिणाम कुछ भी हो। यह विचार आज के व्यस्त जीवन में भी महत्वपूर्ण है, जहाँ लोग अक्सर परिणामों के डर से कार्य करने में हिचकिचाते हैं। अर्जुन को युद्ध के मैदान जैसी कठिन परिस्थितियों में जब अपने धर्म और कर्म के विषय में संशय हुआ तो फिर वहां पर गीता का सूत्रपात हुआ और अंतर्द्वंद्व की स्थिति में उसे क्या करना चाहिए और क्यों करना चाहिए; इसका ज्ञान श्रीकृष्ण जी ने दिया। [13]

स्वयं की पहचान: गीता में आत्मा की अमरता और व्यक्ति की वास्तविक पहचान पर जोर दिया गया है। यह विचार आज के तनावपूर्ण जीवन में आत्म-स्वीकृति और मानसिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है। आज का मनुष्य बाहर की भौतिक दुनिया में इतना खो गया है कि वह अपने भीतर देख ही नहीं पाता और स्वयं से उसकी यह दूरी उसे कई विकारों की ओर धकेल देती है। गीता के चतुर्थ अध्याय में श्रीकृष्ण ज्ञान मार्ग के महत्व व संसार के नियम का वर्णन करते हुए अर्जुन को बताते हैं कि भौतिक पदार्थों से किए जाने वाले यज्ञ की अपेक्षा ज्ञान यज्ञ अधिक अच्छा है क्योंकि निरपवाद रूप से सब कर्म ज्ञान में जाकर समाप्त हो जाते हैं। [14]

संतुलन और संयम: गीता में संतुलन और संयम का महत्व बताया गया है। यह विचार आज के समय में अत्यधिक उपभोक्तावाद और तनाव के बीच संतुलन बनाए रखने में मदद करता है। इसमें समता के भाव को विशेष महत्व दिया गया है। सुख–दुःख, लाभ-हानि, विजय-पराजय हर परिस्थिति से अप्रभावित रहकर जीवन जीने का सन्देश दिया गया है, ताकि जीवन में संतुलन और संयम बना रहे। [15]

सकारात्मकता और आशा: गीता में सकारात्मक दृष्टिकोण और आशा का संदेश दिया गया है। यह विचार लोगों को कठिनाइयों का सामना करने और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। आशा सकारात्मक दिशा में ही अच्छे प्रतिफल की ओर अग्रसर करती है, किन्तु यदि आसक्ति और गलत तरीके से परिणाम प्राप्ति की आशा हो तो उसे दुःख का कारण माना गया है। इस सन्दर्भ में उद्धव गीता

में भी वर्णित किया गया है कि ईश्वर में चित्त न लगाकर जब पिंगला संसार के लिए श्रृंगार करती है तो वह सम्पूर्ण रात्रि निंद्राहीन रह जाती है वहीँ जब वह सांसारिक लोभ की आशा छोड़ देती है और अपना चित्त परम शक्ति की ओर उन्मुख होती है तो अत्यंत आनंद को प्राप्त करती है। [16]

सामाजिक जिम्मेदारी: गीता में समाज के प्रति जिम्मेदारी का भी उल्लेख है। यह विचार आज के समय में सामूहिकता और सामाजिक न्याय के लिए महत्वपूर्ण है। इसी जिम्मेदारी को समझाते हुए श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध के लिए प्रेरित किया। आज के समय के कॉर्पोरेट जगत में सामाजिक जिम्मेदारी को सी.एस.आर. अर्थात कॉर्पोरेट सोशल रिस्पोंसिबिलिटी के रूप में देखा जाता है। यह विचार भी गीता से साम्य रखता है क्योंकि गीता के अनुसार मनुष्य जीवन के चार पुरुषार्थ होते हैं – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें से प्रत्येक पुरुषार्थ अंत में मोक्ष की तरफ लेकर जाता है। इस दृष्टि से सभी पुरुषार्थों को सामाजिक जिम्मेदारी से सम्बंधित माना जाता है। [17]

इन बिंदुओं के माध्यम से, हम देख सकते हैं कि श्रीमद्भगवद्गीता के नैतिक विचार आज भी हमारे जीवन में मार्गदर्शन प्रदान करते हैं और हमें एक बेहतर इंसान बनने की प्रेरणा देते हैं। [18]

निष्कर्ष

श्रीमद्भागवत पुराण एवं अन्य भारतीय ग्रंथों में निहित राजनीतिक दर्शन एक समृद्ध और बहुसंख्यक चित्रपट है जो भारतीय सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य की गहराई से प्रभावित है। आदर्श शासक संप्रभुता की अवधारणा, आध्यात्मिक एवं लौकिक सत्ता के संतुलन और राज्य की धारणा की सूक्ष्म खोज के माध्यम से, पुराण में शासन की प्रकृति, शासक और शासकों के बीच संबंध और राजनीतिक क्षेत्र में शासन और धर्म की भूमिका एक अद्वितीय और सार्वभौमिक दृष्टिकोण प्रदान करता है। जैसा कि भारत के आधुनिक शासकों की परिकल्पना और अपने प्राचीन मठों को समकालीन वास्तविकताओं के साथ जोड़ने की आवश्यकता बताई जा रही है, वैसे ही श्रीमद्भागवत पुराण का राजनीतिक दर्शन; शास्त्र, नीति सिद्धांत और विचारकों के लिए एक मूल्यवान और विचारोत्तेजक स्रोत है। समाज और राष्ट्र की समस्याओं के समाधान के लिए सर्व प्रथम मानवीय गुणों का प्रमाण आवश्यक है। यदि राजनीतिक व्यवस्था में धर्म और आध्यात्मिकता के मानवीय गुणों और मूल्यों का समावेश हो जाए, तो इससे समस्यात्मक सिद्धांतों, हिंसा, और अन्य ऐसी समस्याओं का समाधान संभव है। आधुनिक राजनेताओं को कल्याणकारी भावना से अपनी जिम्मेदारी को समझते हुए कार्य करना चाहिए क्योंकि जब राजनेता निजता और संकीर्णता की प्रवृत्तियों से मुक्त होकर जन कल्याण के लिए काम करेंगे, तभी राष्ट्र का सर्वांगीण और सतत विकास संभव है। भागवत समेत सभी प्राचीन ग्रंथों में त्याग और सेवा का भाव भी सर्वोपरि है। आज के समाज में विशेषकर नई पीढ़ी में त्याग एवं सेवा का भाव विकसित करना आवश्यक है। यह गुण नेताओं से ज्यादा अपेक्षित है ताकि वे अपने कार्यों में मौलिकता और सत्यनिष्ठा का परिचय दें। इसी प्रकार राजनेताओं के जीवन में आध्यात्मिकता का समावेश हो, जिससे वे समाज के प्रति अपनी स्थिति को बेहतर तरीके से निभा सकें और समाज में सभी के प्रति समानता का भाव ला सकें। यह एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो समाज में एकता को स्थापित करता है। इन सुझावों के माध्यम से समाज और राष्ट्र की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है, जिससे एक स्वस्थ और समृद्ध समाज का निर्माण हो सके।

संदर्भ ग्रंथ:

1. भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, स्कंध 12, अध्याय 7, श्लोक 22-23, संस्करण 2017
2. लाल, केदारनाथ (2013). भागवत की कथाएँ, स्वामी अमलानन्द. जी.पी.डी. बॉक्स कम्पनी, कोलकाता- 700014, पेज-09
3. भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, स्कंध 9, अध्याय 10, श्लोक 51, संस्करण 2017
4. भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, स्कंध 9, अध्याय 10, श्लोक 52, संस्करण 2017
5. भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, स्कंध 9, अध्याय 10, श्लोक 53, संस्करण 2017
6. भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, स्कंध 9, अध्याय 10, श्लोक 54, संस्करण 2017
7. https://mjcollegelibrary.kces.in/pdf/novels_2/bhagwat_puran.pdf
8. सैनी, हेमलता. श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika, VOL-6* ISSUE-6, February (Part2), 2019
9. भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, स्कंध 11, अध्याय 17, श्लोक 45, संस्करण 2017
10. भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, स्कंध 11, अध्याय 17, श्लोक 46, संस्करण 2017
11. सोनी, रानी. प्रमुख पुराणों में राजधर्म एवं सुशासन, International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(3): 117-120
12. पाराशर, श्यामसुंदर (2015). भागवतकल्पद्रुम. नव ज्योति प्रेस पंचवटी, मथुरा, पेज 32-33
13. श्रीमदभगवदगीता 1/31
14. श्रीमदभगवदगीता 4/33
15. श्रीमदभगवदगीता 2/38
16. उद्धव गीता 3/44
17. https://fiinovation.co.in/the-dharma-and-karma-of-csr-from-the-bhagavat-gita/
18. चौधरी, मंजू (2019). वर्तमान में श्रीमद्भगवद्गीता के नैतिक विचारों की प्रासंगिकता. International Journal of Applied Research 2020; 6(1):117-121